धर्मसत्ता और आधी आबादी

डॉ. ऋचा प्रसाद

सारांश

धर्म के बारे में अक्सर ये कहा जाता है कि धर्म मानव कल्याण के लिये हैं और उसकी दृष्टि में सभी मनुष्य बराबर होते हैं, पर यह दावा बिल्कुल निराधार हैं। यह सही है कि हर धर्म की पुस्तकों में मनुष्य के कल्याण की बातें हैं, उच्च आदर्श की वकालत है। पर समग्रता से देखने पर सभी धार्मिक पुस्तकों में मनुष्य से मनुष्य की विभेद की बातें भरी पड़ी मिलती हैं। कमोवेश रूप में सभी धर्म ने स्त्री को पुरूष के अधीन ही माना है। दुनिया का कोई भी ऐसा धर्म नहीं है जहाँ स्त्री का दर्जा कमतर नहीं है। लगभग सभी धर्मों में महिलाएँ शोषित की श्रेणी में ही पाई जाती है, सिर्फ शोषण के तरीकों में अन्तर पाया जाता है। धर्म ने जहाँ एक लिंग को दूसरे लिंग के शोषण की धार्मिक मान्यता दी हैं, वहीं इस शोषण के विरूद्ध आवाज को धार्मिक नैतिकता के नाम पर दबाकर शाषितों के विरोध की संभावनाएँ भी कम कर दी हैं। यही नहीं स्त्री को पुरूष से अधिक धर्मभीरू और नैतिक आचरण करने की हिदायत भी दी गई हैं। हमेशा से स्त्रियाँ, पुरूषों की तुलना में अधिक धर्मभीरू रही भी हैं। धर्मभीरू का अर्थ होता है बदलाव को रोकना। चाहे वो बदलाव स्त्री की स्वयं की दशा सुधारने की दिशा में एक छोटा सा कदम ही क्यों ना हो। धर्मभीरू स्त्रियाँ धर्म के नाम पर इन कदमों का विरोध करती हैं। इस प्रकार धर्म के नाम पर असमानता और शोषण पर फलने–फूलने वाली व्यवस्था को बनाए रखने की सफल रणनीति बनाई गई है।

विशिष्ट शब्द– धर्मसत्ता, धर्मभीरू, कमोवेश, मकड़जाल, निराधार, प्रश्नचिन्ह, चिन्ताजनक

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध आलेख विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक प्रकृति का है। शोध के लिये द्वितीय स्रोतों का उपयोग किया गया है। इसके लिये मूलतः इंटरनेट से प्राप्त सामग्रियों, प्रकाशित ग्रंथ, पत्र–पत्रिकाओं में छपे विवरण, निबन्ध एवं लेख तथा विभिन्न शोध ग्रन्थों को अध्ययन का आधार बनाया गया है।

धर्म का नाम धर्म इसलिए पड़ा होगा कि वो सबको धारण करता है। धर्म ने सारी प्रजा को धारण कर रखा है। प्राणियों में हिंसा ना हो इसलिए धर्म का उपदेश दिया गया है। अतः जो अहिंसा मुक्त हो, वही धर्म है। ऐसा धर्मवेत्ताओं का निश्चय है। विकास की आरम्भिक अवस्था में मनुष्य के सामाजिक, सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया में धर्म के महत्वपूर्ण योगदान से इनका नहीं किया जा सकता लेकिन कालान्तर में सम्पत्ति पर व्यक्तिगत अधिकार से प्रभुत्वशाली वर्ग ने अपने प्रभुत्व एवं हितों को शाश्वत बनाए रखने के लिए धर्म का उपयोग बड़ी चालाकी से किया। धर्म का संबंध अलौकिक सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी, सर्वज्ञानी ईश्वर से जुड़ा था, जिसका अस्तित्व जनमानस की अन्धास्था पर टिका था।[1] आज भी लोगों के जीवन में धर्म के गहरे असर से इंकार नहीं किया जा सकता है।

वस्तुतः धर्म के दो रूप से हमारा सामना होता है। एक वह रूप जो महान उपदेशों, शिक्षाओं, नैतिक आदर्शों, ऊँची–ऊँची बातों से भरा है और मनुष्य के शरीर और आत्मा को दो रूप में विभाजित करता है। दूसरा वह रूप है जो आचार संहिताओं के माध्यम से नैतिक एवं सामाजिक विधि–विधान का स्वरूप निर्धारित करता रहा है। अपने इस दूसरे रूप के तहत ही धर्म ने अपने वर्चस्व एवं श्रेष्ठता को बनाए रखने के लिए हिंसा को प्राश्रय दिया, स्त्रियों को पुरूषों से हीन माना जिसके परिणामस्वरूप आज के आधुनिक युग में भी दुनिया की आधी आबादी को कई आधारभूत मानवीय अधिकारों से वंचित रखा जाता है। ईश्वर तथा पिछले और अगले जन्म का भय दिखाकर इस बात की पुख्ता व्यवस्था की गई है कि लोग धर्म की बातों को मानने के लिए बाध्य हो जाएँ।[2]

धर्म के पक्ष में अक्सर यह कहा जाता है कि मूलतः सभी धर्म मानव मात्र के कल्याण के लिए हैं और उसकी दृष्टि में सभी मनुष्य बराबर हैं, पर यह दावा बिलकुल निराधार है। यह सही है कि हर धर्म की पुस्तकों में मनुष्य की कल्याण की बातें हैं, उच्च आदर्शों की वकालत है पर जब समग्रता से हम देखते हैं तब वेद हो, चाहे पुराण या स्मृतियाँ या बाइबिल (न्यू एवं ओल्ड दोनों टेस्टामेन्ट) या कुरान हसीद, इन सभी धार्मिक पुस्तकों में मनुष्य से मनुष्य की विभेद की बातें भरी पड़ी हैं। कमोवेश रूप में सभी धर्म ने स्त्री को पुरूष के अधीन ही माना है।[3] आज भी धर्म की नजर में औरतें अपवित्र मानी जाती हैं। धर्म स्त्री के शरीर से घृणा करता है। दुनिया का ऐसा कोई धर्म नहीं है जहाँ स्त्री का दर्जा कमतर नहीं है। स्त्रियाँ अपने जीवन में धर्म द्वारा किए जा रहे इस विभेद को झेलती रहती हैं। देखा जाए तो सभी धर्मों में महिलाएं शोषित की श्रेणी में ही पायी जाती हैं सिर्फ शोषण के तरीकों में अन्तर पाया जाता है। चूँकि पूरी दुनिया में स्त्रियों की संख्या आधी आबादी की है और जब हम आधी आबादी की बात करते हैं तो इसका अर्थ होता है वो तमाम औरतें जो चाहे किसी भी धर्म, जाति, वर्ग या समुदाय की हो। वस्तुतः सभी धर्म, जाति, वर्ग या समुदाय में स्त्रियों की स्थिति चिन्ताजनक ही है।

हिन्दू धर्म की बात करें तो हम पाते हैं कि धर्मसत्ता के इस मकड़जाल के भीतर स्त्रियों की वास्तविक स्थिति अत्यन्त दयनीय है। जिस हिन्दू धर्म में एक ओर स्त्रियों की पूजा की जाती है वहीं हमारे देश में आज भी कई ऐसे मन्दिर हैं जिनमें स्त्रियों का प्रवेश वर्जित है। साढ़े चार सौ साल से भी अधिक पुराने अहमदानगर जिले में शनि शिगणापुर मंदिर के चबूतरे पर महिलाओं का जाना और उनका सरसों का तेल चढ़ाना मना है। नवम्बर 15 में एक महिला ने सबसे आँख बचाकर मन्दिर में शनिदेव की मूर्ति पर तेल चढ़ाया पर इसके बाद मन्दिर को पारम्परिक तरीके से पवित्र किया गया। इसके परिणाम स्वरूप महिलाओं ने आन्दोलन छेड़ा और गणतंत्र दिवस के मौके पर इस मन्दिर में प्रवेश करने का संकल्प घोषित किया पर महिलाओं को मन्दिर में पहुँचने के पहले ही 400 साल पुरानी परम्परा का हवाला देकर रोक दिया गया और सरकार ने यह बहाना बनाया कि धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। वहीं केरल के सबरीमाला मन्दिर में 10 से 50 साल तक की उम्र की महिलाओं का प्रवेश वर्जित है। यह मुद्दा सुप्रीम कोर्ट के समक्ष विचाराधीन है। केरल के ही पद्मनाभ स्वामी मन्दिर में महिलाएं पूजा नहीं कर सकती हैं।[4] इसी तरह छह सदी से भी पुरानी हाजी अली दरगाह में भी महिलाओं के प्रवेश पर मनाही है, जबकि किसी भी धार्मिक पुस्तकों में यह कहीं नहीं लिखा है कि महिलाओं के साथ लैंगिक आधार पर भेदभाव किया जाए।[5] पर ऐसी भेदभाव की परम्परा कई सालों से चली आ रही है और हमारा समाज यहाँ तक की कानून भी ऐसे मामलों में चुप है। इतना ही नहीं हमारे समाज में कई ऐसी प्रथाएं हैं जिन्हें पारम्परिक धार्मिक मान्यता प्रदान की गई है। हालाँकि इसके संबंध में सख्त कानून बनाए गए हैं पर व्यवहारिक रूप में ये अभी भी जीवित हैं। उदाहरणार्थ– बाल विवाह, सती प्रथा, देवदासी, दक्षिण भारत में स्त्रियों द्वारा नग्न पूजा किया जाना, डायन संबंधित मामले आदि।[6] इन्टरनेशनल सेंटर फॉर वूमेन (आई0सी0आई0डब्ल्यू0) ने बाल विवाह पर शोध कर दुनिया में लड़कियों के बाल विवाह के आंकड़े दिए हैं। इसके अनुसार 47 फीसदी लड़कियों के बाल विवाह के साथ भारत 13 वें स्थान पर है। आज भी भारत में अक्षय तृतीया के दिन कई अबोध और नाबालिग बच्चों को विवाह के बंधन में बाँध दिया जाता है। वहीं दुनिया में पहला स्थान नाइजीरिया का है। भारत में सबसे कम बाल विवाह हिमाचल प्रदेश में है वहीं सबसे ज्यादा बाल विवाह बिहार में है।[7] वहीं सती प्रथा का भी अस्तित्व अभी तक हमारे समाज से खत्म नहीं हुआ है। दिसम्बर 14 में बिहार के सहरसा जिले से 65 वर्षीय स्त्री के सती होने की खबर इस बात की पुष्टि करती है कि सती प्रथा अभी भी जिन्दा है, हमारे हिन्दू समाज में।[8] इसके अलावा देवदासी प्रथा हिन्दू धर्म के माथे पर कलंक के समान है, जिसमें छोटी बच्चियों के साथ धर्म के नाम पर खुला शारीरिक शोषण होता है। देवदासी का सीधा अभिप्रायः है 'सर्वेंट ऑफ गॉड' यानि 'देवता की दासी या पत्नी'। इस प्रथा के अनुसार दलित कन्याओं का विवाह देवता के साथ करवा दिया जाता था और वह मन्दिर में रहकर नाच–गाना करती थी। साथ ही साथ उनका संबंध

पुरोहितों एवं अन्य पुरूषों के साथ बनता था। आज भी कई प्रदेशों में देवदासी प्रथा का चलन जारी है। यह प्रथा मुख्य रूप से दक्षिण भारत में पाई जाती है।[9] कर्नाटक के बेल्लारी जिले में **मुद्दाटनूर** और कलकुंबा गांव की दलित देवदासियों का अमूमन नग्न जुलूस सरेआम निकालने का शर्मनाक तमाशा अभी भी जारी है।[10] कर्नाटक के शिमोगा जिले के **चंद्रागुटी** गाँव में एक मन्दिर है। यहाँ से तीन किलोमीटर की दूरी पर एक नदी है। धार्मिक कर्मकांड के अनुसार दलित स्त्रियाँ इस नदी में नहाकर बिना वस्त्र पहने उपरोक्त मन्दिर में पूजा करने जाती थी और पुरूष इन्हें देखने के लिए खड़े रहते थे।[11] इतना ही नहीं स्त्रियों पर डायन होने का आरोप लगा कर उन्हें नंगा कर के घुमाना, मैला खाने पर मजबूर करना यहाँ तक की उनकी हत्या तक कर देना, इन सबके पीछे धर्म ही होता है।

इस तरह की तमाम प्रथा और परम्परा मानव सभ्यता और उसकी सुसंस्कृति पर प्रश्नचिन्ह की तरह है और ये प्रश्नचिन्ह सिर्फ हिन्दू धर्म पर नहीं है वरण सभी धर्मों की लगभग एक सी ही स्थिति है। मुस्लिम धर्म में महिलाओं की स्थिति तो कुछ ज्यादा ही चिन्ताजनक है। वो चाहे तलाक (तीन तलाक) के रूप में हो, खतना के रूप में या फिर हलाला जैसी घोर निन्दनीय प्रथा के रूप में। इक्कीसवीं सदी में आज भी कई मुस्लिम और अफ्रीकी देशों में औरतें एक अत्यन्त बर्बर अवैज्ञानिक प्रथा की शिकार हैं। पुरूषों की तरह स्त्रियों को भी इन देशों में खतना करना पड़ता है। यह काम अप्रशिक्षित दाइयाँ करती हैं जो चिकित्सा सिद्धान्तों का समुचित पालन नहीं करती। इस कारण कई महिलाएँ टीटनेस जैसी जानलेवा रोग से प्राण गवां बैठती हैं, उनके कई अंगों में स्थायी रूप से कोई कमी रह जाती है। चूँकि औरतों का खतना धार्मिक आचार संहिता का अंग है अतः इसका पालन धार्मिक कर्तव्य है।[12] दुनिया भर के 30 देशों में हर साल करीब 20 करोड़ बच्चियों या लड़कियों का खतना प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। इनमें से आधी आबादी से ज्यादा सिर्फ तीन देश– मिस्र, इथियोपिया और इंडोनेशिया में हैं। भारत में शिया मुस्लिम के बेहद सम्पन्न और शिक्षित समुदाय दाउदी बोहरा में इन प्रथा का रिवाज है। पर भारत में इसे लेकर कानून नहीं है।[13] इसके अलावा हलाला मुस्लिम समुदाय की एक ऐसी प्रथा है जिसमें एक तलाक शुदा पत्नी को अपने पति से दोबारा निकाह करने के लिए पहले किसी दूसरे मर्द से निकाह करके पत्नी धर्म का पालन करने के बाद ही उसे पहले पति द्वारा अपनाया जाता है। हलाला धर्म के नाम पर बनाया गया एक ऐसा कानून है जिसने स्त्री को भोग्या बनाने का काम किया है। हलाला मर्द को सजा देने के नाम पर गढ़ा गया षड़यंत्र है जिसका खामियाजा अंततः औरत को ही भुगतना पड़ता है।[14] इस्लाम धर्म में बहुपत्नि प्रथा की भी इजाजत दी गई है। कोई एक व्यक्ति एक वक्त में अधिक से अधिक 4 पत्नियाँ रख सकता है बशर्ते चारों के साथ वो एक समान व्यवहार करे।[15] तलाक के मामले में स्त्री–पुरूष दोनों को अधिकार है पर पुरूष के लिए तलाक प्रक्रिया जितनी आसान है, उतनी स्त्री के लिए नहीं। तीन तलाक (जो पुरूषों द्वारा दिया जाता है) के तहत पुरूष जब चाहे स्त्री को तलाक दे सकता है।[16] जिसका खामियाजा हमेशा स्त्री ही भुगतती है। इस्लाम में स्त्रियों के लिए परदा लाजमी है। कुरान में लिखा है कि बीवियों, बेटियों और मुसलमानों की औरतों को कह दो कि बाहर निकला करे तो अपने मुँह पर चादर लटका लिया करे। इसलिए मुस्लिम स्त्रियों में बुरका का रिवाज आरम्भ हुआ।[17] इस्लाम धर्म की किसी महिला का अगर किसी पुरूष द्वारा बलात्कार किया जाता है तो उस महिला कि स्थिति बहुत बदतर हो जाती है। यदि वो पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करने गई तो आरोपी द्वारा महिला पर यह आरोप लगाया जाता है कि उसे महिला द्वारा उकसाया गया था। ऐसी स्थिति में पीड़ित महिला पर ही इस्लाम के कानून की धार लटक जाती है। उल्लेखनीय है कि इसमें परिस्थितिजन्य साक्ष्य का कोई स्थान नहीं है। साक्ष्य के आभाव में मुस्लिम देशों में हजारों महिलाओं को हर साल जिना का आरोपी मानकर पत्थर मार कर हत्या कर दी जाती है। किसी महिला का बलात्कार होने की स्थिति में आरोपी को दण्ड तभी दिया जा सकता है जब आरोपी स्वयं अपना अपराध मान ले या फिर चार प्रमुख गवाह मिलें। सामान्यतः दोनों बातें असंभव हैं, इसी कारण मुस्लिम देशों में महिलाओं को जिना का आरोपी मानकर पत्थर से मार कर मारने की सजा सुनायी गई है। इस तरह धर्म के नाम पर औरतों को सार्वजनिक रूप से उधेड़ा जाना क्या सही है ? इस्लाम में गर्भ निरोध को भी हराम माना गया है जिसका प्रत्यक्ष असर स्त्रियों के जीवन पर पड़ता है। चूंकि मुसलमान शरीयत कानून को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं, इस कारण कुरान हदीस और शरीयत के नाम पर सदियों से नारी पद दलित रही है।[18] जब तक नारी को समान दर्जा हासिल नहीं होता है यह स्थिति बनी रहेगी, पर धर्म स्त्री और पुरूष को समान दर्जे की इजाजत नहीं देता है।[19]

हिन्दू और मुस्लिम धर्म की तरह ईसाई धर्म में भी महिलाओं की स्थिति दयनीय है। ईसाई धर्म की बात करें तो अक्सर यह कहा जाता है कि ईसाई धर्म ने स्त्रियों की दशा को सुधारा है पर क्या ऐसा संभव है? तब, जब ईसाई समाज ने इस बात पर सबसे ज्यादा जोर दिया कि कठोर नैतिक संहिताओं का उल्लंघन नहीं किया जाए और उसका सख्ती से पालन किया जाए। क्या ऐसे समाज में स्त्री कभी भी उदार एवं स्वतंत्र स्थिति का उपयोग कर सकती है ? मठाधीशों ने सदैव स्त्रियों को मुख्यतः बहकाने वाली मोहनी के रूप में चित्रित किया है। हमेशा स्त्रियों को अपवित्र एवं पाप के रास्ते में ले जाने वाली माना है।[20]

ईसाइयों की धार्मिक पुस्तक ओल्ड और न्यू टेस्टामेन्ट (बाइबल) दोनों में ही स्त्रियों के प्रति रूख कुछ उदार नहीं है। इसके अनुसार ईश्वर ने पहले आदम अर्थात् पुरूष को बनाया। जेनेसिस (11/22) के अनुसार आदम की सुषुप्तावस्था में उसकी रीढ़ की हड्डी से ईव अर्थात स्त्री को बनाया क्योंकि आदम की सहायता के लिए ईव की आवश्यकता हुई। जेनेसिस (3/16) के अनुसार पृथ्वी पर पहला अपराध स्त्री ने किया।[21] चर्च की दृष्टि में पुरूष की तुलना में हीन होने के कारण स्त्री को चर्च की पूर्ण सदस्यता का अधिकार नहीं दिया गया। स्त्रियाँ धर्माचार्य (क्लर्जी), धर्माधिकारी (बिशप), धर्मपाल आदि के पदों को प्राप्त नहीं कर सकती हैं। पोप के पदवी पर आसीन होने की बात तो कल्पना से बाहर थी। ओल्ड एवं न्यू टेस्टामेन्ट में रूढ़िवादियों के मत का समर्थन है। न्यू टेस्टामेन्ट में यह स्पष्ट लिखा है पुरूष की रचना स्त्री के लिए नहीं वरन स्त्री की रचना पुरूष के लिए हुई है इसलिए स्त्री के लिए उचित है कि वह आधीनता के चिन्ह के रूप में अपने सिर को ढके।[22] ईसाई धर्म में ब्रह्मचर्य पर अत्यधिक जोर दिया गया है। इसके अनुसार स्त्री को अपवित्र और पुरूष को गुमराह करने वाली माना गया है इसलिए पुरूष से अपेक्षा की जाती है कि वो स्त्री से दूर रहे। पुरूष ब्रह्मचारी रह कर ही धार्मिक पद (बिशप, पादरी आदि) प्राप्त कर सकता है। अगर पुरूष विवाहित है तो पहले उसे अपनी पत्नी को त्यागना होगा।[23] औरतों को पाप का घड़ा कहा गया है। स्त्री के लिए नन या मदर बनने के लिए कौमार्य अनिवार्य है।[24] रोमन कैथोलिक चर्च ने गर्भपात की स्वीकृति नहीं दी है, और ना ही गर्भनिरोधक उपकरणों के उपयोग की इजाजत। इसी मत का अनुसरण करते हुए कैथोलिक प्रधान देश आयरलैण्ड में 1992 में बलात्कार की शिकार एक स्त्री को यहाँ के चर्च ने गर्भपात की इजाजत नहीं दी थी। उसे विवश होकर लन्दन जाकर गर्भपात करवाना पड़ा। इस घटना ने पूरी दुनिया के जनमानस को झकझोर कर रख दिया, पर चर्च ने अपना रवैया नहीं बदला। धर्म द्वारा मानव अधिकार हनन के इस तरह के उदाहरण स्त्री पर लगाए कड़े प्रतिबन्धों के द्योतक हैं, जो आज भी धर्म के नाम पर लागू हैं और स्त्रियाँ उनका पालन करने के लिए बाध्य हैं।

इस प्रकार जहाँ धर्म ने एक वर्ग को दूसरे वर्ग तथा एक लिंग को दूसरे लिंग के शोषण की धार्मिक मान्यता दी, वहीं इस शोषण के विरूद्ध आवाज को धार्मिक नैतिकता के नाम पर दबाकर शोषितों के विरोध की संभावनाएं भी कम कर दी। यही नहीं स्त्री को पुरूष से अधिक धर्मभीरू और नैतिक आचरण करने की हिदायत दी गई है। हमेशा से स्त्रियाँ पुरूषों की तुलना में अधिक धर्मभीरू रही भी है। धर्मभीरू का अर्थ होता है 'बदलाव को रोकना'। चाहे वो बदलाव स्त्री की स्वयं की दशा सुधारने की दिशा में एक छोटा सा कदम ही क्यों ना हो। धर्मभीरू स्त्रियाँ धर्म के नाम पर इन कदमों का विरोध कर रही हैं। इस प्रकार धर्म के नाम पर असमानता और शोषण पर फलने–फूलने वाली व्यवस्था को बनाए रखने की सफल रणनीति बनाई गई है।

निष्कर्ष

पूरी दुनिया में स्त्रियों आधी आबादी हुई है। अब आधी आबादी की बात हो तो इसका मतलब होता है वे तमाम औरतें जिनके बीच किसी भी जाति, धर्म या वर्ग का भेद नहीं हो। कोई भी समाज चाहे वो किसी भी धार्मिक संस्था वाला हो अपनी आबादी के आधे भाग की उपेक्षा करके विकास नहीं कर सकता है। चूँकि धर्म हमारे सामने उच्च नैतिक आदर्शों को रखता है जिससे प्रेरित होकर हम जीवन जीने की कला सीखते हैं। अतः धर्म को स्त्री और पुरूष के बीज के विभेद को खत्म करके धार्मिक साम्यवाद वाली स्थिति उत्पन्न करनी चाहिये। जहाँ धर्म के नजर में स्त्री और पुरूष में कोई अन्तर न समझा जाये ताकि इसका अनुसरण करके प्रत्येक समाज सही मायने में विकास कर पाए।

संदर्भ सूची:–

1. गीतेश शर्मा, ''अपनी बात'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– XI
2. गीतेश शर्मा, ''अपनी बात'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– IX
3. गीतेश शर्मा, ''धर्म और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 157
4. http//www.bbc.com/hindi/india/2016/01/160130–women–demand–rights–pk
5. http/hindi news 18.com/blogs/hari–govind/entry of women–in– shani–signapur–temple–450373.html
6. अरविंद जैन, ''बाल विवाह कानून में झोल'', औरत होने की सजा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, परिवर्द्धित संस्करण– 2006, पृष्ठ संख्या– 40
7. प्रभात खबर, राँची, झारखंड, 29 दिसम्बर 2013
8. उत्तम काबले (अनुवाद–किशोर दिवसे), देवदासी, संवाद प्रकाशन, मेरठ, पहला संस्करण 2008, पृष्ठ संख्या– 8, 9, 25, 36 और 59
9. उत्तम काबले (अनुवाद–किशोर दिवसे), देवदासी, संवाद प्रकाशन, मेरठ, पहला संस्करण 2008, पृष्ठ संख्या– 29
10. उत्तम काबले (अनुवाद–किशोर दिवसे), देवदासी, संवाद प्रकाशन, मेरठ, पहला संस्करण 2008, पृष्ठ संख्या– 175
11. गीतेश शर्मा, ''इस्लाम और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 192
12. navbharat times. com.update nov6, 2016, 11:40 AMIST
13. गीतेश शर्मा, ''इस्लाम और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 188
14. गीतेश शर्मा, ''इस्लाम और नारी'', धर्म के नाम पर,, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 189 और 190
15. गीतेश शर्मा, ''इस्लाम और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 191
16. gavrav.com/womaninistana.asp
17. गीतेश शर्मा, ''इस्लाम और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 193
18. गीतेश शर्मा, ''ईसाई धर्म और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 174
19. गीतेश शर्मा, ''ईसाई धर्म और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 177
20. गीतेश शर्मा, ''ईसाई धर्म और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 178
21. गीतेश शर्मा, ''ईसाई धर्म और नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 178
22. गोपा जोशी, ''भूमिका'', भारत में स्त्री असमानता, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, संशोधित संस्करण 2011, पृष्ठ संख्या– 74
23. गीतेश शर्मा, ''ईसाई धर्म में नारी'', धर्म के नाम पर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2013, पृष्ठ संख्या– 180
24. गोपा जोशी, ''भूमिका'', भारत में स्त्री असमानता, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, संशोधित संस्करण 2011, पृष्ठ संख्या– 76